हिन्दी- विभाग
डॉ० कविता कुमारी सिंह

हिन्दी प्रतिष्ठा, वर्ष - 01

विषय :— सूर के भ्रमरगीत

सूर के भ्रमरगीत की विषय-वस्तु का मूल आधार श्रीमद्भागवत के दशम स्कन्ध का 46 वाँ तथा 47 वाँ अध्याय है। इसमें गोपियों की तीव्र विरहानुभूति भ्रमर की अन्योक्ति के सहारे वर्णित है, इसलिए इसे 'भ्रमरगीत' कहा गया है। सूरदास ने 'सूरसागर' में भ्रमरगीत प्रसंग की रचना की है जिसमें उद्धव के ब्रज आगमन से लेकर मथुरा लौटने तक की कथा कही गई है।

सूर ने अपनी प्रतिभा से भागवत के भ्रमरगीत का आधार लेते हुए भी मौलिक उद्भावनाएँ की हैं, जैसे भागवत के उद्धव कृष्ण के प्रिय सखा, महाज्ञानी और मंत्री हैं। श्री कृष्ण माता-पिता को प्रसन्न करने तथा ब्रज की गोपियों के वियोग दुःख को शांत करने उद्धव को ब्रज भेजते हैं, किन्तु सूरदास के उद्धव अद्वैतवादी, अहंकारी और ज्ञानमार्गी

है। उनके हृदय में भक्ति की सरसता नहीं है। वे और साधना में विश्वास करते हैं। श्री कृष्ण उन्हें प्रेमभक्ति की महत्ता समझाने तथा ज्ञान का अहंकार दूर करने के लिए ब्रज भेजते हैं। भागवत में उनका रूप और उनकी वेशभूषा ही कृष्ण के समान बताई गई है, किन्तु सूरसागर में उनका रंग भी कृष्ण और भ्रमर की भाँति काला बताया गया है। इसी प्रकार भागवत और सूर के भ्रमरगीत का प्रतिपाद्य भी भिन्न है।

भ्रमरगीत जैसा सुन्दर उपालम्भ काव्य और कहीं नहीं मिलता। इसमें एक ओर तो प्रेमानुभूति की अनन्यता है तो दूसरी ओर उक्ति-वैचित्र्य के द्वारा रसानुभूति कराने का प्रयत्न। वास्तविकता तो यह है कि सूर ने अपने भ्रमरगीत को सहृदयता, भावुकता, चातुरता से रसमय बना दिया है।

सूर की गोपियाँ यद्यपि भावुक और अत्यन्त भोली हैं, किन्तु जैसा कि ~~रा~~ रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि किसी बात के न जाने कितने सीधे-टेढ़े ढंग उन्हें मालूम थे। वे अत्यन्त वाक्पटु हैं। वे अपने वाक्-चातुर्य से उद्धव से विनोद करती हैं और

उनके निर्गुण ब्रह्मज्ञान का उपहास उड़ाती हैं। कुब्-
नाम कहने से भी नहीं हिचकतीं और उनके साथ
कृष्ण को भी तरह-तरह से उपालम्भ देती हैं।
'आयो जोग सिखावन पांडे या
आयो घोष बड़ो व्यापारी' कथन में
उद्धव के प्रति गोपियों का विनोद-भाव कितनी
गहराई से व्यक्त हुआ है। विनोद के साथ ही
उपहास भी उड़ाती हैं —

'बिलगि जानि मानौ ऊधौ प्यारे।
यह मथुरा काजर की कोठरि जे आवत ते कारे।"

गोपियाँ तर्क से भी नहीं चूकतीं।
उद्धव द्वारा निर्गुण ब्रह्म का वर्णन करने पर
वे कहती हैं — 'निर्गुण कौन देस को बासी'।
उस ब्रह्म को वे कृष्ण के प्रति अपनी अनन्य
निष्ठा से पूर्णतः नकार देती हैं —

'ऊधौ मन नाहिं दस-बीस।
एक हुतौ तो गयौ श्याम संग, को अराधै ईस।

इस तर्क पर उद्धव से
कुछ नहीं कहते बनता। गोपियाँ व्याज
निन्दा के द्वारा भी उद्धव पर अपने व्यंग्य

बात चलाती हैं — 'सखी री मथुरा में द्वै हंस' कहकर गोपियाँ उद्धव और अक्रूर पर व्यंग्य करती हैं।

गोपियों के उपालम्भ में कृष्ण की निष्ठुरता के प्रति विरोध भी है और अपने असहायपन के कारण कातरता भी। 'मधुकर काके मीत भए' जैसे उपालम्भ पदों में गोपियों की कातरता देखी जा सकती है।

निष्कर्षतः भ्रमरगीत में गोपियों की वाग्वैदग्ध्यता कृष्ण के प्रति जहाँ अनन्य भाव को व्यक्त करती है, वहीं निर्गुण ज्ञान को तुच्छ ठहराती हैं, जो भ्रमरगीत का मुख्य उद्देश्य भी है।